यह भी चला जाएगा

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

जीवन में सुख और दुःख आता जाता रहता है। सुख में प्रसन्नता और दुख में कष्ट होना स्वाभाविक है। प्रकृति का नियम है कि हर संयोग के साथ वियोग जुड़ा रहता है। यहां कोई स्थाई नहीं है। संयोग–वियोग चलता रहता है। इस संसार को परिवर्तनशील कहा जाता है। परिवर्तनशील संसार में पुण्योदय–पापोदय पूर्वजन्म के कर्म के अनुसार जीवन को नियंत्रित करते रहते हैं। पुण्योदय में सुख और पापोदय में दुःख की प्राप्ति होती है। यह सब पूर्वजन्म के कर्मों के परिणाम है। सुख–दुःख में अधिक विचलित नहीं होना चाहिए। ऐसी स्थिति में ईश्वर का चिंतन करके धैर्य धारण करना चाहिए। कबीरदासजी ने कहा है–

दुःख में सुमिरन सब करै, सुख में करै न कोय।

जो सुख में सुमिरन करै, दुःख काहै को होय।।

अर्थात् जब मनुष्य पर विपत्ति आती है तभी वह ईश्वर का स्मरण करता है। सुख के समय कोई ईश्वर का चिंतन नहीं करता। सुख और दुःख का अन्तर्दर्शन क्या है ? इस विषय पर चिन्तन किया जा रहा है। जो अनुकूल है वह सुख है और जो प्रतिकूल है वह दुःख है। सुख और दुःख मनुष्यकृत है। प्रायः लोग यह कहते हैं कि सुख और दुःख किसी दूसरे के द्वारा दिया जाता है किन्तु यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाये तो यह प्रतीत होता हैं कि सुख दुःख मनुष्य का अपना बोया हुआ है।

दार्शनिक दृष्टि से देखा जाये तो आत्मरमण करना ही सुख है। इसके अतिरिक्त जितनी भी सांसारिक वस्तुएं हैं वे सब दुःख स्वरूप है। मानव जब परायी वस्तु को अपना मान लेता है तो उसे दुःख का मिलना स्वाभाविक है। वैभाविक जितनी भी प्रवृत्तियां है उनसे दुःख ही उत्पन्न होता है, किन्तु मानव उन्हें ही सुख स्वरूप मानता है। जैसे कुत्ता सुखी हुयी हड्डी को खाता हैं और स्वयं के मुख से निकले हुये रक्त को चाटकर सुख की अनुभूति करता है वैसे ही यह सांसारिक सुख भी है। मानव माया स्वरूप इस संसार को सत्य मानकर के व्यवहार करता है।

यह मेरा है, यह तेरा है इसी में पूरे जीवन को बिता देता है। जो वास्तविक सुख है उधर उसका ध्यान ही नहीं जाता। इसीका परिणाम है कि वह दुःख को सुख मान बैठता है और प्रसन्नता का अनुभव करता है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा हैं कि सूत्र में मोतियों की भांति यह सम्पूर्ण संसार मुझमें ही समाया हुआ है। जो मानव इस बात को स्वीकार कर आनन्द की अनुभूति करता है वह तो सुख प्राप्त करता है किन्तु जो अहंकारवश ईश्वर या परमात्मा को अन्यत्र खोजता है उसे कही भी परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती। जैसे पानी और हिम एक ही है केवल रूपान्तरण दिखाई देता है वैसे ही आत्मा और परमात्मा एक ही है, केवल दृष्टि का अन्तर है। माया के कारण यह संसार भिन्न रूप में प्रतीत होता है। इसकी वास्तविकता यह है कि यह वास्तव में है ही नहीं। जिस प्रकार से रज्जु में सर्प की प्रतीति होती है किन्तु जब प्रकाश की सहायता से रस्सी का ज्ञान होता है तो वहां सर्प नहीं रहता केवल रज्जु ही रहती है। वैसे ही यह संसार है।

यथार्थ का ज्ञान होने पर सत्य की प्रतीति हो जाती है। दर्शन का सत्य यही है। प्रायः सभी दर्शनों में सुख और दुःख की मीमांसा की गई है और सभी दर्शनों ने इसके स्वरूप को जानने का प्रयास किया है। सभी दर्शनों का सत्य प्रायः समान ही है। रास्ते अलग–अलग है। जिस प्रकार से नदियां अनेक मार्गों से होती हुई अन्त में समुद्र में मिल जाती हैं, उसी प्रकार से चिन्तन की धाराएं सभी दर्शनों की अलग–अलग हैं किन्तु अन्तिम सत्य सबका एक ही है। मोक्ष जो जीवन की अन्तिम अवस्था हैं वही पूर्ण सत्य है। इसको प्राप्त करने के लिए सभी दर्शनों ने अपने–अपने मार्ग बतलाये हैं।

भौतिकवादी दर्शन देहात्मवाद में विश्वास करता है अर्थात् देह को ही आत्मा मानकर के जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, किन्तु यह सुख भौतिक सुख है। प्रिय का मिलन और अप्रिय का संयोग सुख दुःख हो सकता है। इस संसार में सभी सुख की इच्छा करते हैं दुःख कोई नहीं चाहता। लेकिन दुःख अपने आप मनुष्य के पास आ जाता है। इसका कारण यह है कि जो मनुष्य जैसा कर्म करता है उसे उसका फल सुख और दुःख के रूप में प्राप्त होता है। यदि मानव अच्छा कर्म करता है तो उसे सुख की प्राप्ति होती है और यदि बुरा कर्म करता है

तो उसे दुःख की प्राप्ति होती है। इसलिए सुख दुःख को मनुष्यकृत कहा गया है। बंधन का अर्थ है– परतंत्रता और मुक्ति का अर्थ है स्वतंत्रता।

परतंत्रता दुःख स्वरूप है और स्वतंत्रता सुख स्वरूप। किसी भी तोते को यदि पिंजड़े में बांधकर रखा जाये और उसे खाने के लिए अच्छी–अच्छी वस्तुएं प्रदान की जाये फिर भी वह प्रसन्न नहीं रहता। वह मुक्त गगन में विचरण करना चाहता है। परतंत्रता किसी को प्रिय नहीं होती, स्वतंत्रता सबको प्रिय होती है। पशु, पक्षी, मानव सभी स्वतंत्र रहना चाहते हैं। यह तो बंधन का एक स्वरूप हुआ। कषाय सहित होने से जीव कर्म के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है, वह बन्ध है। जिस प्रकार बन्धन युक्त प्राणी स्वतन्त्र होकर यथेच्छ गमन करता है, उसी तरह कर्म–बन्धन मुक्त आत्मा स्वाधीन हो अपने अनन्त ज्ञानदर्शन सुख आदि का अनुभव करता है। मनुष्य गति से ही जीव का मोक्ष होना संभव है।